International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 875-876

'निर्मला' में चित्रित नारी–समस्याएँ

डॉ0 पूनम काजल
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग, हिन्दू कन्या महाविद्यालय, जींद, हरियाणा, भारत।

सारांश
प्रेमचन्द सामाजिक जीवन को एक नई गति और दिशा प्रदान करने वाले युगचेता साहित्यकार थे। वे साहित्य को मानव की संवेदना और आन्तरिक व्यक्तित्व को बदलने का एक समर्थ औज़ार मानते थे। उन्होंने अपनी अनेक रचनाओं में नारी–जीवन से जुड़ी अनेकानेक विषमताओं को उद्घाटित किया है। तत्कालीन युग में व्याप्त दहेज प्रथा व अनमेल विवाह की त्रासदी से आहत प्रेमचन्द ने अपने 'निर्मला' उपन्यास में अत्यन्त व्यापकता के साथ इन समस्याओं को उठाया है। उन्होंने इस उपन्यास में भारत की निरीह, अबला नारी को केन्द्र में रखकर उसकी अमानवीय जीवन–स्थितियों को उद्घाटित करने का भरसक प्रयत्न किया है। नारी–जीवन से सम्बन्धित समस्याओं तथा उनके दुष्परिणामों के चित्रण के मूल में प्रेमचन्द्र जी का मुख्य उद्देश्य यही रहा है कि विद्रोह का नारा बुलन्द करने से पहले वे उसकी स्वीकृति के लिए उपयुक्त समाज का गठन चाहते थे।

मुख्य शब्द : अमानवीय, बुलंद, निकृष्टतम, वैषम्य, अतिरंजित।

प्रस्तावना

'निर्मला' उपन्यास की समस्याओं पर दृष्टिपात करते हुए दहेज–प्रथा केन्द्रीय समस्या के रूप में उभरकर आती है। यह अत्यन्त त्रासद है कि हिन्दू समाज में कन्या के संस्कारों की अपेक्षा रुपयों की थैलियों को ही प्राथमिकता दी जाती है। निर्मला के पिता की आकस्मिक मृत्यु पर भालचन्द्र सिन्हा गहरा अफसोस प्रकट करते हैं, लेकिन दहेज मिलता दिखाई न देने पर अशुभ लक्षणों का बहाना बनाकर विवाह से आनाकानी करते हैं। एक अच्छी–खासी भूमिका तैयार कर वे इस मृत्यु को विधाता का संकेत मानकर विवाह से स्पष्ट इन्कार कर देते हैं– "ईश्वर को मंजूर ही न था कि वह लक्ष्मी मेरे घर आती, नहीं तो क्या यह वज्र गिरता?..... जब ईश्वर को मंजूर नहीं है तो मेरा क्या बस है? यह मृत्यु एक प्रकार की अमंगल सूचना है जो विधाता की ओर से हमें मिली है..... ..... विधाता स्पष्ट रीति से कह रहा है कि यह विवाह मंगलमय न होगा।[1]

वर पक्ष, विशेषकर वर की लोभी और स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण ही आज विवाह ने व्यापार–व्यवसाय का रूप धारण कर लिया है। ऐश्वर्यपूर्ण जीवन बिताने का इच्छुक युवा वर्ग कन्या पक्ष से मोटी रकम ऐंठना चाहता है। इस दुष्प्रवृत्ति का निकृष्टतम रूप भुवनमोहन के कथन में सहज ही देखा जा सकता है– "कहीं ऐसी जगह शादी करवाइए कि खूब रुपए मिलें। और न सही, एक लाख का डौल हो। वहाँ अब क्या रखा है। वकील साहब रहे नहीं, बुढ़िया के पास अब क्या होगा।"[2]

सच तो यह है कि निर्मला की करूण दशा के लिए उत्तरदायी लोगों की श्रृंखला में भुवन मोहन पहले स्थान पर खड़ा करने योग्य है। उसके इस कथन कि 'किसी धनी की लड़की से शादी हो जाती, तो चैन से कटती, में निश्चय ही उसकी लोभवृत्ति का निकृष्टतम रूप दिखाई देता है। दूसरी ओर, दहेजखोरों का मुँह भरने में असमर्थ कल्याणी की विवशता भी उजागर होती है। पं0 मोटेराम द्वारा नए रिश्ते लेकर आने पर पूरा दृश्य ऐसा लगता है मानो ठोक–बजा कर खरीद–फरोख्त की जा रही हो। व्यंग्य का विस्तार करते हुए कल्याणी की बेचारगी भी द्रष्टव्य है जो जेब में पैसा न होने के कारण विवश भाव से हाथ मलते क्रेता की याद अधिक दिलाती है– "यहाँ एक हज़ार देने को कहाँ से आएगा? एक हज़ार तो आपका अनुमान है, शायद वह और मुँह फैलाए।"[3]

दहेज–प्रथा ने घुन की तरह समाज की स्वस्थ जड़ों को इस प्रकार खा लिया है कि व्यक्ति अपने नैतिक एवं सामाजिक दायित्वों से मुक्त होने के लिए कोई–न–कोई आड़ लेने लगा है। कल्याणी भी इसका अपवाद नहीं। सिर्फ निर्मला के भविष्य की चिंता करके वह स्वयं अपने और शेष संतान के भविष्य को दाँव पर नहीं लगा सकती। इसलिए अच्छा–बुरा सब निर्मला के भाग्य पर छोड़कर परिस्थितियों से समझौता कर लेती है– "अगर लड़की के भाग्य में सुख भोगना बदा है, तो जहाँ जाएगी, सुखी रहेगी; दुःख भोगना है तो जहाँ जाएगी, दुख झेलेगी।"[4]

परन्तु कल्याणी के इस कथन के द्वारा ही उसे दोषमुक्त नहीं किया जा सकता। हमारा सामाजिक ढाँचा ही ऐसा है कि अभिभावक पुत्री को जल्द–से–जल्द दूसरे के हाथों सौंप कर अपने दायित्व से मुक्ति पा लेना चाहते हैं। प्रेमचन्द्र स्पष्ट लिखते हैं– "कल्याणी का दोष कुछ कम न था। अबला होना ही उसे दोषों से मुक्त नहीं कर सकता। उसे अपने लड़के लड़कियों से कहीं अधिक प्यारे थे। लड़के हल के बैल हैं, भूसे खली पर पहला हक उनका है, उनके खाने से जो बचे वह गायों का .....।"[5]

माँ की इसी अकर्मण्यता के कारण ही निर्मला सस्ते अनमेल विवाह का शिकार हो कर अनेक मानसिक यंत्रणाओं को सहती हुई असमय ही मृत्यु का ग्रास बन जाती है। वह स्वयं दहेज–प्रथा के अभिशाप की भोक्ता है, इसलिए अपनी बेटी को बलि का बकरा नहीं बनाना चाहती। अत्यन्त कृपणतापूर्वक बेटी के दहेज के लिए एक–एक पाई जोड़ने के मूल में अपने इतिहास को न दोहराने की ललक ही प्रमुख है। यहाँ यह भी विचारणीय है कि निर्मला के करूण अवसान का उत्तरदायित्व उस समाज पर है जिसमें धन व्यक्ति के जीवन की कसौटी समझा जाता है। 'इसके निराकरण का एकमात्र उपाय है कि हम इसके विरुद्ध जनमत तैयार करके समाज में इस कुप्रथा के प्रति घृणा उत्पन्न करें।'[6]

यह विडम्बना ही है कि दहेज की असमर्थता के कारण ही अनेक

गुणी व सुशील युवतियों को बूढ़ों के गले मढ़ दिया जाता है। अनमेल विवाह के कारण त्रासदीपूर्व जीवन जीने की भयंकर अनुभूति निर्मला को हुई हैं। परम्परा से चली आ रही इस विचारधारा को नकारते हुए प्रेमचन्द एक नए पथ की ओर इंगित करते हैं। निर्मला व तोताराम के वैवाहिक सम्बन्धों की दुर्दशा दिखाकर प्रेमचन्द अभिभावकों को सचेत करते प्रतीत होते हैं – "..... ..... हमें अपनी लड़कियों की इच्छा के विरूद्ध केवल रूढ़ियों का पालन करने के लिए और खानदान की नाक कटने के भय से कन्या को किसी कुपात्र के गले नहीं मढ़ना चाहिए।"[7]

निर्मला के लिए विवाह का अर्थ घुटन, त्रासदी व सन्देह का शिकार होना है, जबकि वास्तविकता यह है कि विवाह तो सम्बन्धों की गरिमा को पहचानने का माध्यम है, अपनी भावनाओं व दायित्वों का प्रसार है; लेकिन अनमेल विवाह के कारण निर्मला के व्यक्तित्व का स्वस्थ विकास नहीं हो पाता, क्योंकि उम्र की असमानता पति–पत्नी के सम्बन्धों में मानसिक वैषम्य उत्पन्न कर देती है। प्रेमचन्द लिखते हैं – "एक रत्न जटिल विशाल भवन था, दूसरा टूटा–फूटा खण्डहर।"[8]

यह विडम्बना ही है कि निर्मला चक्की के दो पाटों के बीच पिसती हुई तिल–तिल करके स्वयं को होम करती रहती है। सौतेली माँ के रूप में निर्मला के घर में पदार्पण करते ही पारिवारिक जीवन की अनेक विषमताएँ उत्पन्न हो जाती हैं। पग–पग पर उसे लांछित होना पड़ता है। वस्तुतः निर्मला की दुरावस्था के चित्रण के मूल में प्रेमचन्द का उद्देश्य यह भी रहा है कि माता–पिता भाग्य का आश्रय लेकर कन्याओं के जीवन से खिलवाड़ न करें। इस सम्बन्ध में प्रेमचन्द जी का सुझाव है– "..... कन्याएँ स्वयं अपना भाग्य अपने हाथ में लें और विवाह के बन्धन में उस समय तक न पड़ें, जब तक कोई ऐसा वर न मिले, जो प्रेम–भाव से उनके सामने सिर झुकाए। जब कन्याओं में यह आत्मबल उदय होगा, तभी इस जाति का उद्धार होगा।"[9]

कल्याणी की परम्परा भीरूता और संस्कारबद्धता के द्वारा प्रेमचन्द अभिभावकों को यह समझाना चाहते हैं कि सामाजिक कुरीतियाँ हिम्मत दिखाकर ही समाप्त की जा सकती हैं। 'अब तो किसी भाँति सिर का बोझा उतारना था' की मानसिकता से ग्रस्त अभिभावकों को सचेत करते हुए प्रेमचन्द लिखते हैं – "..... माता–पिता को लड़कियों को विवाहित देखने का मोह छोड़ देना चाहिए और जैसे युवकों के विषय में हम उनके पथभ्रष्ट हो जाने की परवाह नहीं करते, उसी प्रकार हमें लड़कियों पर भी विश्वास करना चाहिए। तब यदि वे गृहिणी जीवन बसर करना चाहेंगी, तो अपनी इच्छानुसार विवाह कर लेंगी, अन्यथा अविवाहित ही रहेंगी।"[10]

अनमेल विवाह की त्रासदी से आहत प्रेमचन्द मरणासन्न निर्मला के मुख से अपना सन्देश समाज में प्रसारित कर एक क्रान्ति लाने का आह्वान करते प्रतीत होते हैं। अपनी बच्ची को ननद के हाथों में सौंपती निर्मला के मर्मांतक शब्दों में उसके जीवन की समूची पीड़ा साकार हो उठती है– "बच्ची को आपकी गोद में छोड़े जाती हूँ। अगर जीती–जागती रहे, तो अच्छे कुल में विवाह कर दीजिएगा..... ..... चाहे क्वाँरी रखिएगा, चाहे विष देकर मार डालिएगा, पर कुपात्र के गले न मढ़िएगा, इतनी ही आपसे मेरी विनय हैं।"[11]

'निर्मला' उपन्यास में रूक्मिणी के माध्यम से विधवा की त्रासदी को हमारे समक्ष उजागर कर प्रेमचन्द विधवा–विवाह का भी समर्थन करते प्रतीत होते हैं। रूक्मिणी की दीनावस्था हमें यह सोचने पर विवश कर देती है कि क्या आश्रयदाता परिवार में विधवा की दशा एक दासी से भी हीन है? विधवा की दुर्दशा की ओर इंगित कर प्रेमचन्द्र चाहते हैं कि शास्त्रों का हवाला देकर विधवा के प्रति अन्याय न किया जाए। निर्मला की घुटन व कुंठा के द्वारा प्रेमचन्द स्पष्टतः यह संदेश देते प्रतीत होते हैं विधुर को विधवा के साथ ही विवाह का अधिकार होना चाहिए। चालीस–पचास वर्ष की उम्र में, तीन–तीन बच्चों के होते हुए एक 15 वर्ष की युवती के साथ, मात्र भोग–लिप्सा की पूर्ति हेतु विवाह करना सर्वथा अनुचित है। हिन्दू समाज में विवाह के सम्बन्ध में जो दोहरे नैतिक या सामाजिक मापदण्ड हैं, प्रेमचन्द उनमें बदलाव लाना आवश्यक मानते हैं। वे लिखते हैं– "जब युवक वृद्धा के साथ प्रसन्न नहीं रह सकता, तो युवती क्यों किसी वृद्ध के साथ प्रसन्न रहने लगी?"

उद्देश्य

वस्तुतः प्रेमचन्द यह सन्देश जन–जन तक पहुँचाना चाहते हैं कि परिवार के परम्परावादी दृष्टिकोण और जड़ सामाजिक परम्पराओं के कारण ही नारियों को त्रासदपूर्ण स्थितियों से गुज़रना पड़ता है। प्रेमचन्द कोई समाधान प्रस्तुत नहीं करते, फिर भी त्रासदी की भीषणता का अनुमान तो पाठक वर्ग लगा ही सकता है। हालांकि निर्मला क्रांति एवं विद्रोह का झंडा लेकर चलने वाले आधुनिका युवती के रूप में चित्रित नहीं की गई है, लेकिन उसकी विडम्बनापूर्ण स्थितियों को अतिरंजित रूप देकर प्रेमचन्द अपने युग की सहमी–दुबकी नारी को संघर्ष से जूझने की प्रेरणा देते प्रतीत होते हैं। जन्म से अभिशप्त और जीवन से संतप्त निर्मला जैसी लड़कियाँ पग–पग पर समाज व परिवार द्वारा उत्पीड़ित की जाती रही हैं। उनके परित्राण हेतु तब तक कोई नहीं आएगा, जब तक वे स्वयं अपनी स्थिति सुधारने के लिए कटिबद्ध नहीं होती। बिसूरते रहने से वे सिर्फ 'निर्मला' बन सकती हैं। कुछ करना है तो सुधा की भाँति साहस बटोरना होगा।

निष्कर्ष

वस्तुतः प्रेमचन्द्र जी ने अपने 'निर्मला' उपन्यास में चित्रित नारी–समस्याओं के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालकर समाज को झकझोरने का प्रयास किया है। वे उस जर्जर समाज–व्यवस्था की ओर भी हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं जिसमें धन की महत्ता इतनी अपार है कि व्यक्ति का अस्तित्व गौण हो गया है। प्रेमचन्द की मान्यतानुसार जिस समाज में विवाह आत्मिक विकास में साधन नहीं, उसका नैतिक ह्रास अवश्यम्भावी है। सच तो यह है कि "निर्मला ने मध्यवर्गीय समाज के उस गंदले अध्याय को हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया है और उलटने–पलटने की प्रेरणा दी है जिसमें प्राणों का कोई मूल्य नहीं, केवल दहेज का मूल्य है।"[13]

सन्दर्भ

1. प्रेमचन्द, निर्मला, पृ0 19–20
2. वही, पृ0 25
3. वही, पृ0 35
4. वही
5. वही, पृ0 33
6. वही, पृ0 268
7. वही, विविध प्रसंग, भाग–3, पृ0 260
8. वही, निर्मला, पृ0 49
9. वही, विधि प्रसंग, भाग–3, पृ0 256
10. वही, पृ0 260
11. प्रेमचन्द, निर्मला, पृ0 75
12. वही, पृ0 93
13. वही, पृ0 32